"फोटोग्राफी पेंटिंग से बहुत अलग है। जिस क्षण हम फोटो खींच रहे होते हैं वह एक सेकण्ड का एक बहुत छोटा रचनात्मक हिस्सा होता है। जीवन ने हमारे सामने एक अद्‌भुत क्षण परोसा होता है जो हमारी आँख को नज़र आना चाहिए। और हमें मालूम होना चाहिए कि कब क्लिक दबाना है। यही क्षण फोटोग्राफर का रचनात्मक क्षण होता है। एक बार वो क्षण गया तो फिर गया ही, हमेशा के लिए।"

हेनरी कार्तिए ब्रेसाँ

सत्यजीत राय लिखते हैं कि ब्रेसाँ के अधिकाँश चित्र राजनैतिक घटनाओं के बारे में नहीं हैं, वे साधारण लोगों के चित्र हैं। गलियों में, बाज़ारों में, नदी के किनारे, पहाड़ों में – अकेले या समूह में – अपना रोज़मर्रा का जीवन जीते हुए लोग। ब्रेसाँ बिलकुल साधारण चीज़ को एकदम असाधारण स्तर तक उठा देते हैं, और ठीक यही है हमारे समय के इस महान फोटोग्राफर कार्तिए ब्रेसाँ की खासियत।

महात्मा गाँधी को जिस वक्त गोली मारी गई थी उससे लगभग 10-15 मिनट पहले ही ब्रेसाँ गाँधी जी से मिले थे। वे लौट ही रहे थे कि उनको इसकी खबर मिली। वे बिना देरी किए घटना स्थल पर पहुँचे। भीड़ और भागमभाग। गाँधी जी का शव एक कमरे में रखा हुआ था जहाँ पुलिस का पहरा था। कहा जाता है कि ब्रेसाँ की जब फोटो लेने की यह तरकीब नाकामयाब रही तो किसी तरह वे छज्जे तक चढ़े। थूक से वहाँ के शीशे की धूल पोंछी और फोटो खींच ली।

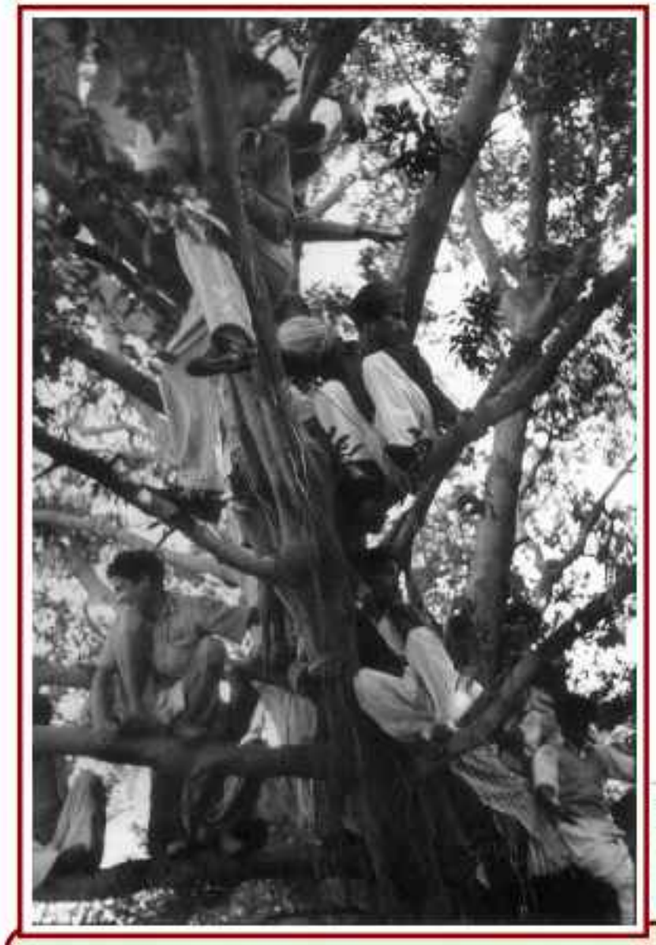

ईश्वर अल्ला तेरे जहाँ में....

ईश्वर अल्ला तेरे जहाँ में
नफरत क्यों है जंग है क्यों?
तेरा दिल तो इतना बड़ा है
इंसां का दिल तंग है क्यों?
ईश्वर अल्ला तेरे जहाँ में....

कदम-कदम पर सरहद क्यों है
सारी ज़मीं जो तेरी है
सूरज के फेरे करती है
फिर क्यों इतनी अँधेरी है
इस दुनिया के दामन पर
इंसां के लहू का रंग है क्यों?
ईश्वर अल्ला तेरे जहाँ में....

गूँज रही हैं कितनी चीखें
प्यार की बातें कौन सुने
टूट रहे हैं कितने सपने
इन के टुकड़े कौन चुने
दिल के दरवाज़ों पर ताले
तालों पर ये ज़ंग है क्यों?
ईश्वर अल्ला तेरे जहाँ में....

फिल्मः 1947 अर्थ
गायकः अनुराधा श्रीराम व सुजाता मोहन
संगीतकारः ए. आर. रहमान
गीतकारः जावेद अख्तर
निर्देशकः दीपा मेहता

बापू की अस्थियों को गंगा में बहाने के लिए जाती ट्रेन को छूने भर के लिए उमड़ी भीड़। (ऊपर) बापू के अन्तिम दर्शन के लिए उमड़ी भीड़ (नीचे) (दिल्ली 1948)

दुनिया भर को कैमरे में कैद करने वाले को अपनी फोटो खिंचवाना सख्त नापसन्द था। इसलिए उनकी अपनी फोटो कम ही दिखती हैं। 1975 में जब ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने उन्हें मानद उपाधि दी तो उन्होंने अखबार से अपना चेहरा ढाँप लिया।